JETIR.ORG ISSN: 2349-5162 | ESTD Year : 2014 | Monthly Issue
JOURNAL OF EMERGING TECHNOLOGIES AND INNOVATIVE RESEARCH (JETIR)
An International Scholarly Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

उत्तराधिकार : समकालीन समय में अधिकार व कर्त्तव्यों दोनों की माँग

डॉ० मन्जु
एसोसिएट प्रोफेसर
दिल्ली विश्वविद्यालय

सारांश : पुत्र व पुत्री के जन्म की प्राकृतिक प्रक्रिया एक समान होने के बावजूद सामाजिक स्तर पर व्याप्त लैंगिक असमानता विद्यमान है, जिसको दूर करना जरूरी, सहदायिक स्तर पर दोनों को समान उत्तराधिकार का अधिकार संबंधी संवैधानिक प्रावधान लोकतांत्रिक मूल्य समानता को पोषित करती व्यवस्था प्रतीत होता है जिसमें अधिकार के साथ–साथ कर्तव्यों में भी पुत्र व पुत्री को बराबरी समकालीन समय की मांग है।

Keyword : (संकेत शब्द) उत्तराधिकार, सहदायिक, पुत्री को संपत्ति में अधिकार, अधिकार व कर्तव्य सिक्के के दो पहलू।

हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम 1956, भारतीय सामाजिक व्यवस्था में परिवर्तन का वो क्रांतिकारी कदम था, जिसके परिचय ने पूरे हिंदू समाज को हिला कर रख दिया था। इस अधिनियम के द्वारा संयुक्त परिवार संपत्ति के अन्तर्गत उत्तराधिकारी तथा उनके अधिकारों का स्पष्ट वर्णन किया गया था। साधारण शब्दों में कहा जाए तो अधिनियम से पूर्व जिस संपत्ति को अविभाज्य माना जाता था उस पर अब उत्तराधिकारी घोषित करने तथा इच्छापत्रहीन (बिना वसीयत संपत्ति) संपत्ति में मृतक की विधवा, बेटे व बेटियों को बराबर अंश मिलेगा का प्रावधान किया। 2005 में इस अधिकार को और विस्तार मिला तथा बेटियों को बेटों की तरह सहदायिक (Coparsene) माना जाएगा। इसी तरह अब एक नयी माँग यह उठ रही है कि अब बेटियां बेटों की तरह संपत्ति में अधिकार के साथ–साथ वृद्ध माता–पिता के रख–रखाव के कर्त्तव्य को भी पूरा करे।

समकालीन समय की माँग जहाँ एकल परिवार में एक या दो बच्चों के परिवार का चलन चल पड़ा है, में वृद्ध माता–पिता की संपत्ति के साथ जिम्मेदारी भी यदि उत्तराधिकारी को संवैधानिक प्रावधान के तहत सौंपी जाए तो एक अच्छा कदम हो सकता है। बंटियों को सहदायिक बनाने की राह कतई आसान नहीं थी। इसका पता हमें इसकी पृष्ठभूमि में जाकर चलता है।

उत्तराधिकार की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि– भारत में उत्तराधिकार संबंधी प्रावधानों हेतू दो प्रचलित परंपराओं पर आधारित शाखायें मौजूद थी (1) मिताक्षरा– यह याज्ञवल्क्य–स्मृति पर सबसे महत्वपूर्ण टीका है इसके लेखक विज्ञानेश्वर है। बंगाल, असम, त्रिपुरा एवं उड़ीसा के कुछ भागों को छोड़कर सारे भारत में इसका प्रभावशाली अधिकार है। (2) दायभागः यह हिंदू विधि के बंगाल शाखा का यह प्रमुख निबंध है। यह जीमूतवाहन द्वारा लिखी गई है। यह संपत्ति में पुत्र के हित और विभाजन के लिए मांग करने के उसके अधिकार के विषय में मिताक्षरा से भिन्न है।

हिन्दू विधि की इन दोनें शाखाओं में कुछ अंतर देखे जा सकते हैं। जैसे मिताक्षरा में संपत्ति पर बालक का अधिकार उसके जन्म से माना जाता है, संपत्ति बेचने का पिता का अधिकार सीमित होता है क्यांकि पुत्र चाहे तो पिता के विरुद्ध भी बंटवारे का दावा प्रस्तुत कर सकता है। इसमें उत्तराधिकार का सिद्धांत रक्त के सिद्धान्त पर काम करता हैं यह एक परंपरानिष्ठ पद्धति है।

वही दायभाग के अन्तर्गत पिता के जीवन काल में लड़कों का पैतृक संपत्ति पर कोई अधिकार नहीं होता। सिर्फ पिता की मृत्यु के बाद ही संपत्ति पर अधिकार होता है। प्रत्येक व्यक्ति की मृत्यु के बाद उसका हिस्सा उसके उत्तराधिकारियों जैसे विधवा, बेटे–बेटियों को मिले ऐसा प्रावधान है। उत्तराधिकार पिंडदान देने के आधार पर निर्धारित किया गया है। दायभाग परालौकिक लाभ प्राप्त करने के सिद्धान्त पर आधारित है, अर्थात् दाय वह प्राप्त कर सकते है.... जो मृतक को पिड़दान दे सके। यह एक संशोधित पद्धति है।

इन दो शाखाओं के आधार पर भारत में उत्तराधिकार के नियम तय किए गए थे। परंपरागत विधि या कहे प्राचीन समय से संयुक्त परिवारों का प्रचलन था जिसके परिणामस्वरूप संपत्ति भी संयुक्त संपत्ति हुआ करती थी। जिसमें संपत्ति का विभाजन जैसे सिद्धांतों का प्रचलन नहीं था। इसी के चलते उत्तरदायित्व भी संयुक्त (सभी के लिए) माने जाते थे। मिताक्षरा में ज्वाइंट टेनेनसी का प्रचलन भी देखा जाता था। इसी कारण स्त्रियों को संपत्ति में बहुत ही सीमित अधिकार प्राप्त था। स्त्रीधन (विवाह के समय वर पक्ष व वधू पक्ष से प्राप्त उपहार) पर स्त्रियों का सीमित अधिकर होता था। जिसे वह प्रयोग तो कर सकती थी पर खरीद या बेच नहीं सकती थी। शुरुआत में शास्त्रों में यह वर्णन था कि पुत्री को भी संपत्ति में हिस्सा दिया जाए, लेकिन कालांतर में इन सिद्धांतों में गिरावट आने लगी। अगर बात सहदायिकी की जाए तो मिताक्षरा व दायाभाग दोनों में भी स्त्री की वैवाहिक स्थिति ही संपत्ति का अंश निर्धारित करती थी जैसे वरियता में सबसे ऊपर विवाहित पुत्री जिसका पुत्र हो, विवाहित पुत्री तथा अंत में अविवाहित पुत्री होती थी

शास्त्रों में वर्णित ये प्रावधान कांलातर में धूमिल होने लगे तथा महिलाओं को संपत्ति के अधिकार में कोई भी अंश प्राप्त न होना आम बात थी। ब्रिटिश काल में अंग्रेजी शासन में कई संवैधानिक सुधारों के द्वारा क्रांतिकारी सामाजिक बदलाव किये गए। 1937 में हिंदू वूमन राइट्स टू प्रापर्टी अधिनियम पास हुआ, जिसमें विधवा महिला को संयुक्त परिवार की संपत्ति में अधिकार का प्रावधान किया गया, जिसका रूढ़िवादी वर्ग ने कड़ा विरोध किया। कृषि भूमि को इसमें शामिल नहीं किया गया (ऐसा उस समय माना जाता था), लेकिन स्वतंत्रता पश्चात् कुछ मामलों में जैसे गुरु अम्मा के पति की मृत्यु के बाद (1954 में) जब उसके देवर व उसके बच्चों ने संपत्ति में हिस्सा देने से यह कह कर मना किया कि विधवा का कृषि भूमि पर अधिकार नहीं तो सर्वोच्च न्यायलय 1937 के अधिनियम को आधार बनाकर (जस्टिस सुजाता मनोहर तथा जस्टिस जी.बी. पटनायक) निर्णय दिया कि विधवा को मिलने वाली संपत्ति में कृषि भूमि में भी विधवा का हिस्सा होगा। लेकिन इस विषय पर लंबे समय तक वाद–विाद बना रहा तथा तथा 2005 के उत्तराधिकार संशोधन अधिनियम के द्वारा बेटियों को भी संपत्ति में बराबर का हिस्सेदार मान लिया गया। यह रास्ता काफी लम्बा व कठिनाईयों से भरा था। देशमुख अधिनियम, हिन्दू लॉ समीति का गठन–सिफारिश, हिन्दू कोड बिल तथा हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियम 1956 व संशोधन अधिनियम 2005।

सहदायिकी (co-parcener) में बेटे–बेटियों को समान उत्तराधिकार बनाकर मानने का जो प्रावधान आज वास्तविकता के धरातल पर दिखाई पड़ता है, वह हिन्दू लॉ कमैटी तथा डॉ. भीमराव अम्बेडकर के प्रयास द्वारा तैयार हिन्दू कोड बिल का ही परिणाम है। हिन्दू कोड बिल में प्रावधान किया गया था कि संयुक्त परिवार संपत्ति में कोई भी व्यक्ति अपने पूर्वज के जीवनकाल में उनसे उनकी संपत्ति में हिस्सा पाने का अधिकारी होगा। संयुक्त संपत्ति पर सभी उत्तराधिकारी का समान भाग होगा तथा जब किसी भी व्यक्ति को संपत्ति में से अपना अंश प्राप्त होगा तब से वही उस संपत्ति का अधिकारी माना जाएगा।

इसी प्रकार यदि किसी महिला को कोई हिस्सा प्राप्त होगा, तो वह हिन्दू वूमन इन्टस्टेट कानून के अन्तर्गत उसकी अधिकारिणी मानी जाएगी। इसी प्रकार पुत्र को भी पूर्वजों द्वारा लिये गए ऋणों की जिम्मेदारी से मुक्त किया गया। संयुक्त उत्तर जीविका को सामान्य उत्तरजीविका में बदल दिया गया। सबसे महत्वपूण प्रावधान यह किया गयी कि स्त्रियों को उनकी संपत्ति चाहे वो चल हो या अचल की संपूर्ण अधिकारिणी बनाया। स्त्रीधन पर स्त्री का ही अधिकार होगा।

उत्तराधिकार के संदर्भ में पुत्र के साथ–साथ पुत्री को भी बराबर का अधिकार दिया गया तथा स्त्रियों की वैवाहिक स्थिति चाहे जो भी सबको एक ही स्थान पर माना नया। उत्तराधिकारियों

में प्राथमिकता शुद्ध रक्त को ही जाए का प्रावधान रखा गया। स्त्रीधन में भी पुत्र व पुत्री दोनों को बराबर का हिस्सा प्राप्त हो यह इस तार्किक प्रावधान की भी स्थान दिया गया।

हिंदू उत्तराधिकारी अधिकार अधिनियम 1956 के अन्तर्गत इन सभी प्रावधानों को कानूनीजामा पहनाया गया। साथ ही यह प्रावधान भी किया भी किया गया कि यदि कोई व्यक्ति हिंदू धर्म का त्याग कर देता है तो वह उत्तराधिकारी नहीं होगा। रोग या अंग विकार, उत्तराधिकार से अयोग्यता का आधार नहीं होगा तथा यदि किसी संपत्ति का कोई वारिस नहीं है तो वह संपत्ति सरकार को चली जाएगी। हिंदू उत्तराधिकार संशोधन अधिनियम 2005 में बेटियों को भी बेटों के समान जन्म से ही सहदायिक माना गया।

समकालीन समय में उत्तराधिकारियों की श्रेणी में बेटियों का होना एक अनिवार्य कदम सा दिखाई पड़ता है। आज संयुक्त परिवार पद्धति लगभग खत्म सी हो गई है, उसका स्थान एकल परिवारों ने ले लिया। एकल परिवारों में भी एक या दो बच्चें का चलन स्पष्ट दिखाई पड़ता है (हिंदू परिवारों में)। ऐसे में यदि किसी परिवार में एक या दोनों बेटियां ही है तो संपत्ति पर दोनों का अधिकार होगा तथा वृद्धावस्था में दोनों को ही माता–पिता की जिम्मेदारी भी उठानी होगी लेकिन यदि किसी परिवार में एक बेटा व एक बेटी है तो संपत्ति कानूनी रूप दोनों का जाएगी। चूंकि संपत्ति दोनों को बराबर प्राप्त हो रही है तो उत्तरदायित्व भी दोनों को बराबर ही वहन करने होते। लैंगिक समानता का अर्थ मात्र समान अधिकारों के मापदण्ड में ना रख समान उत्तरदायित्व को निभाना भी होगा।

जैसा कि हम हमेशा से सुनते आए है तथा जो तार्किक भी है कि बिना कर्तव्यों के अधिकार की प्राप्ति नहीं होती। अतः लैंगिक समानता में भी समान अधिकारों के साथ–साथ समान कर्तव्यों का निवर्हन करना चाहिए। कहा जात है कि जहां अधिकार व्यक्ति की माँग है, वही कर्तव्य समाज की माँग जै। जैसा कि वाइल्ड ने कहा है कि अधिकार का महत्व कर्तव्यों के संसार में ही हैं यदि समाज के सभी व्यक्ति सहयोग करेंगे तभी अधिकारों का अस्तित्व रह पायेगा और जब सहयोग की भावना का विकास होता है तभी कर्तव्य आ जाते है। वास्तव में कर्तव्यों के पालन करने में अधिकारों के उपभोग का रहस्य छिपा हुआ है। अधिकार और कर्तव्य एक ही सिक्के के दो पहलू है। एक के न होने पर दूसरे का भी कोई महत्व नहीं होता। प्रत्येक अधिकार अपने साथ एक कर्तव्य लाता है तथा प्रत्येक कर्तव्य की पूर्ति हेतू अध्किार आवश्यक है।

अधिकार व कर्तव्यों का ये अन्तर्संबंध जीवन के प्रत्येक पहलू पर साबित होता नजर आता है माता–पिता का कर्तव्य है कि वे बच्चों का सही प्रकार से लालन–पालन करे तो उनका अधिकार

यह भी है कि इसके बदले बच्चे उन्हें पूरा सम्मान व आदर देकर कृतज्ञ रहे। बच्चें का कर्तव्य है कि वे अच्छे विद्यार्थी बने तो वे अच्छा रोजगार प्राप्त कर पाए ये उनका अधिकर है। प्रत्येक व्यक्ति अच्छा नागरिक बने ये उसका कर्तव्य है, ठीक इसी तरह मौलिक अधिकारों के द्वारा एक संपूर्ण व्यक्तित्व का निर्माण कर जीवन व्यतीत करना उनका अधिकार है। बेटियों को बेटों के बराबर हर क्षेत्र में समानता का अवसर देना राज्य, समाज व परिवार का कर्तव्य है उसी तरह कर्तव्यों की बराबर पूर्ति करना दोनों के लिए अनिवार्य है।

संदर्भ

1. एगनेस, फलाविया., (1999), लॉ एंड जेंडर इनइकवैलिटिः द पालिटिक्स ऑफ वूमनस राइट्स इन इण्डिया, आक्सफोर्ड प्रैस, न्यू दिल्ली
2. राजगोपाल, जी.आर., (1975) द स्टोरी आफ द हिंदू कोड, जर्नल आफ द इण्डियन लॉ इंस्टीट्यूट वाम्ल्यूम 17 न 4
3. अग्रवाल आर के., (2014) हिंदू विधि, सैंट्रल लॉ एजेंसी, हिंदी पेपर बैक
4. केसरी यू.पी.डी., (2016) हिंदी विधि, सैंट्रल लॉ एजेंसी, आईएमबीएन 978–938496154
5. हिंदू लॉ बैर एक्ट (2014), सेक्शन 2 (द हिंदू सक्सेशन एक्ट 1956)
6. मेन्सकी वर्नर., (2013) मोर्डन इण्डियन फैमिली लॉ, राऊथलेज प्रकाशक, आईएसबीएन 978–113897313